उ.प्र. हिन्दी संस्थान द्वारा 'धर्मयुग सर्जना पुरस्कार' से सम्मानित

मूल्य : ₹ 40/-

मई-अगस्त 2024

निकट-38

संपादक : कृष्ण बिहारी

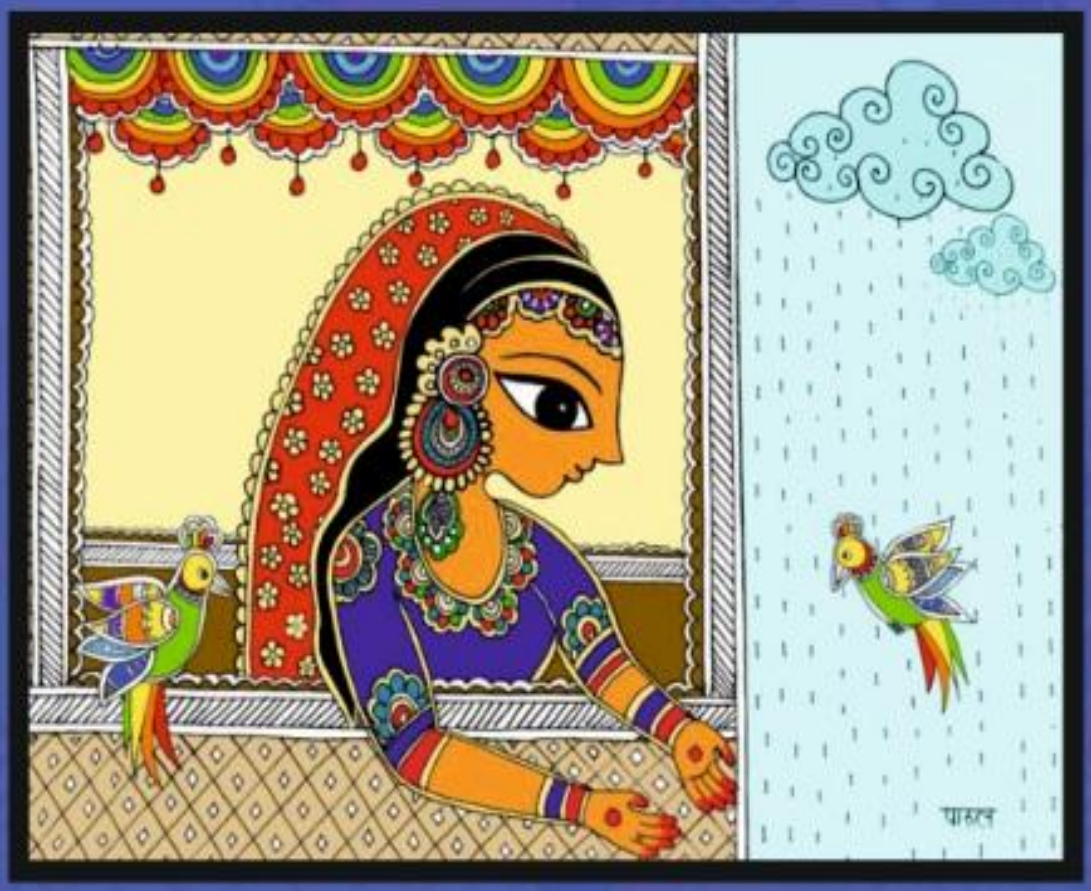

आकर्षण : आगामी अंक - कथाकार प्रियंवद विशेषांक

निकट

कथा-प्रधान त्रैमासिकी

उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा 'धर्मयुग सर्जना पुरस्कार' से सम्मानित

संयुक्त अरब इमारात से शुरू अब भारत से प्रकाशित

वर्ष-17, अंक-38, मई-अगस्त 2024, मूल्य-₹40

व्यवस्थापक
अशोक कुमार
सलाहकार
राजेन्द्र राव
संपादक
कृष्ण बिहारी
उप-संपादक
रामनारायण त्रिपाठी, लखनऊ
धनंजय सिंह
राधेश्याम यादव, अबू धाबी
भूपेंद्र कुमार, यू.ए.ई.
सहयोगी-राजवंत राज,
रियाज़ अहमद
पारुल तोमर
व्यवस्थापक
अभिनव त्रिपाठी
कानूनी सलाहकार
राजेश तिवारी एडवोकेट
2/241, विजय खण्ड,
गोमती नगर, लखनऊ

भारतीय भाषा संवर्धन संस्थान द्वारा सहयोग प्राप्त

आवरण - पारुल तोमर

रेखांकन - राजवंत राज

मूल्य :
भारत में 40/- रुपये
खाड़ी में 20 दिरहम
यू.के. और अमेरिका में 5 डॉलर

सदस्यता शुल्क
1 वर्ष के लिए = रु 500/-
3 वर्ष के लिए = रु 1500/-
निम्न खाता सं. में
नगर / चेक / डी.डी. जमा करें
बैंक का नाम : बैंक ऑफ बड़ौदा
शाखा : सराय मसवानपुर ब्रांच, कानपुर
खाता सं. Krishna Behari Tripathi
28050100010192
IFSC : BARB0SAPRBS

रचनाएं भेजने का पता
निकट कार्यालय-
HIG-46, B BLOCK, PANKI
KANPUR-208020
Mo. 6307435896
ईमेल:
krishnatbihari@yahoo.com

इस अंक में...

संपादकीय -*समय से बात* - देवता बनकर लिखोगे, क्या लिखोगे? 02
पिछले अंक पर प्रतिक्रिया - मीनाधर पाठक 05
कहानियाँ
लता शर्मा - **अच्छे दिन** 08
ममता सिंह - **पत्थर पर उगी धूप** 11
अजयश्री - **आशीर्वाद** 14
सुरेश हंस - **कमांडर की नाक** 17
अरुणेन्द्र नाथ वर्मा - **जन्म जन्मांतर** 24
देव वंश दुबे - **संगमरमर का पिता** 28
महेश शर्मा - **हमें भीख दे दो** 31
अनूदित कहानियाँ
फूलचंद मानव - **श्वेत तितली का अता-पता** 35
रामपाल श्रीवास्तव - **प्रतिरोध** 41
श्याम सुंदर चौधरी - **रुदन एक नदी का** 45
नीलम शर्मा 'अंशु' - **फूलों की फसल** 50
संस्मरण -
सदानंद गुप्त - **विद्वत्ता, निष्ठा और समर्पण के प्रतिमान...** 61
धनंजय कुमार सिंह - **मैंने इन्हें करीब से देखा (समापन किस्त)** 66
लघुकथाएं -
प्रियंका गुप्ता, संजय सरोज, मॉर्टिन जॉन, श्याम मिश्रा
आठ गीतकार - 69
यतीन्द्र नाथ राही, रमाकांत शर्मा उद्भ्रांत, बुद्धिनाथ मिश्र, वीरेंद्र आस्तिक, जयराम जय, शैलेंद्र शर्मा, बृजनाथ श्रीवास्तव, विनोद श्रीवास्तव
आर. पी. उपाध्याय की एक कविता
व्यंग्य - समीक्षा तैलंग 77
पुस्तक समीक्षा -
माफ करना यार पर राजेश कदम 79
जलता रहे दीया पर रीता त्रिवेदी 81
उठे हुए हाथ पर मनोज कुमार 84
स्टेपल्ड पर्चियाँ पर डॉ. हरीदास व्यास 86
कौशल पांडेय की बाल कथाओं पर कैलाश बाजपेई 87
थके पाँव से बारह कोस पर गोविंद सेन 88
हरीश पाठक की चयनित कहानियों पर रीता दास राम 90
साज़-बाज़ पर संदीप तोमर 92
अरब दुनियाँ की कहानियों पर अमरीक सिंह दीप 93

अगला अंक - निकट-39
सितंबर-दिसंबर 2024
कथाकार प्रियंवद पर केन्द्रित विशेषांक

स्वामी, सम्पादक कृष्ण बिहारी, एच.आई.जी. - 46, पनकी, बी ब्लाक, कानपुर - 208020 से प्रकाशित
मुद्रक अमन प्रकाशन कानपुर- 9415475817, 8419891954

संपादकीय

समय से बात – 38

देवता बनकर लिखोगे, क्या लिखोगे ?

ठहाके लगाने वाली बात पर खुल कर हँसना तो दूर, तुम्हारे ओठों पर मुस्कराहट तक नहीं आती । मुस्कराने वाली बात पर भी तुम्हारे चेहरे पर खुरदुरे पत्थर चेचक के दाग की तरह कुटे होते हैं । पहाड़ जैसा दुख अगर तुम पर पड़ जाये या समझ लो कि वज्रपात ही हो जाये तो तुम वीडियो बनाकर उसे तुरंत सोशल मीडिया पर डालने के लिए उतावले हो जाते हो । तुम्हारी आँखों से आँसू तो क्या ही ढलकें, पलकें भी नहीं भीगतीं । संवेदना प्रकट करने के लिए अगर दो-चार इंसान तुम्हारे पास पहुँचते हैं तो तुम उनसे पूछते हो – इन दिनों नया क्या लिखा ? सुनो, मैंने अभी-अभी जो लिखा... और तुम उन्हें अपना लिखा सुनाने लगते हो । उनको, जो उन वक़्तों में तुम्हारे दुख से बुरी तरह हिल उठे हैं । तुम लोगों को तपस्यालीन वाल्मीकि दिखते हो । दीमक की बांबियों से ढके होने पर भी तुम्हें कोई असर नहीं होता । लोग कहते हैं – यार, वज्र जैसी छाती है तुम्हारी... । और तुम निर्विकार बने अपने ऊपर हुए वज्रपात को भीतर ही भीतर इंज्वाय करते हो । प्रकट करने में तुम्हारा विश्वास नहीं है । दूसरों के प्रति तुममें संवेदना का लघुतांश भी नहीं बचा । उनके सुख-दुख में शरीक होना तो दूर, उनसे सहानुभूति हो पाना भी अब तुम्हारी सामर्थ्य में शेष नहीं रहा... असल में तुम वह देवता हो जो देना भूला ही नहीं, छोड़ चुका है । तुम्हारे लिए दुनिया शाम का अख़बार है जिसमें कुछ नया, अनोखा और विचारणीय जैसा कुछ भी नहीं । तुम अयं निजः परोवेति गणना लघु चेत्साम से इतना ऊपर उठ चुके हो कि आसमान तुम्हारे सिर से कुछ ऊंचा और ज़मीन तुम्हारे पाँवों से कुछ नीचे हो गई है... त्रिशंकु का नाम सुना है ? वही हो गए हो तुम... तुम न ज़मीन के हुए न आसमान के...

तुम्हारे भीतर एक भोंपू है और उस भोंपू में तुम्हारी अपनी चालीसा है जिसे तुम हमेशा ऑन रखते हो।

वह चलता रहता है । समझ लो कि तुम बी बी सी हो । अपना महिमामंडन तुम्हें अहंकार मिश्रित दंभ में उबालता है और तुम खुद को गौरवान्वित अनुभव करते हो । एक हाथ में जितनी उँगलियाँ हैं उतने ही भोंपू तुम्हारे पास और भी हैं जो तुम्हारे भोंपू के साथ-साथ बजते हैं । उनकी विचारधारा तुम्हारी है और तुम्हारी विचारधारा उनकी है । तुम दोनों के पास अपनी विचारधारा नहीं है । विज्ञान का यह नियम तुम्हारे लिए असत्य है कि समान ध्रुव एक दूसरे को झटक कर दूर फेंक देते हैं । तुम समान ध्रुव होकर भी चिपके रहते हो, क्या यह कम है ! वैचारिक स्वतन्त्रता, प्रतिबद्धता,पक्षधरता और तटस्थता किस चिड़िया का नाम है ! ताज़ा हवा का कोई झोंका तुम्हें छू तक नहीं जाता । तुम्हारा पक्ष-विपक्ष सब एक-सा है । ऐसा सिक्का जिसके दोनों पहलू एक हैं । चित भी मेरी, पट भी मेरी का एक राग तुम्हारे भीतर अहर्निश चलता रहता है । यह पक्का राग है । काली कामर है, चढ़े न दूजो रंग । दुनिया में कोई अन्य तुम्हें बेहतर दिखता नहीं और यह बात तो तुम्हें कभी याद ही नहीं आती – मो सम कौन कुटिल, खल कामी... सच भी तो है तुम अपनी कुटिलताओं और कामनाओं में बेजोड़ हो, अतुलनीय हो । तुम्हारा और तुम्हारे भोंपुओं का लक्ष्य एक है । अर्जुन की आँख जिस तरह निशाने पर रहती है उसी तरह तुम्हारा मंतव्य भी ।

ऐसा नहीं है कि दया, सहानुभूति, करुणा, सहयोग और मानवता आदि शब्द से तुम्हारा कोई परिचय नहीं था । था, किन्तु तुम्हारे भीतर के सोते सूख गए । अब ये सभी शब्द तुम्हारे अपने और अपनों के लिए हैं । समाज इसमें कहीं भी नहीं आता । क्योंकि समाज तो अब तुम्हारे चिंतन की भावभूमि ही नहीं रही । तुम समाज से ऊपर हो । विशिष्ट हो । तुम लेखक हो और 'देवता' हो । अपनी पूजा स्वयं करते हो मगर चाहते हो कि पूजे भी जाओ । सब तुम्हें पूजें । और तुम पत्थर के पत्थर बने रहो। पुजापे के असाध्य रोग से ग्रस्त हो...संग्रहणी के शिकार हो। अपना ही खाया तुम्हें नहीं पच रहा तो दूसरों का खाया-पिया तुम्हें कैसे पचेगा ?

तुलसीदास की तरह तुम कैसे मान सकते हो – कवि के एकहुं भाव न मोरे ।

तुम सर्वगुण सम्पन्न जो हो । सूर की तरह कैसे कह सकते हो – प्रभु, मोरे अवगुन चित न धरो ।

अवगुण तो तुमसे उतनी दूर हैं जितनी गंदगी से मक्खी । कबीर की तरह तुम कैसे मान सकते हो- मसि कागद छूयो नहीं कलम गही नहिं हाथ । तुम तो लैप टॉप पर बैठते हो जहां कागद-कलम की जरूरत ही नहीं । उनकी गैरमौजूदगी में भी तुम्हारे उत्पादन पर कोई